भगवान बादरायणव्यासप्रणीत शारीरकमीमांसाशास्त्र

के प्रथम चार सूत्र (चतुःसूत्री)

एवं उस पर पूज्यपाद श्रीशङ्कराचार्यकृत भाष्य

तथा उन दोनों का सरल सीधे–सादे हिन्दी शब्दों में अनुवाद

~~~~~~0~~~~~~

शङ्करं शङ्कराचार्यं केशवं बादरायणम्।
सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः॥
ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने।
व्योमवद्व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः॥
~~~~~~

प्रस्तावना

साधारण ज्ञान तथा भौतिक विज्ञान की सीमाएँ

हम जो कुछ जानते हैं, उसके लिए हमारे पास साधारणतः पाँच ही साधन होते हैं – कानोंसे सुनना, त्वचासे छूना, आँखोंसे देखना, जीभसे चखना एवं नाकसे सूँघना। फिर हमारे पास दूसरे साधन हैं – सोचनेकी शक्तिसे अनुमान करना, जैसे दूर धुआँ देखनेसे अग्निको सोचना या फिर दिनमें कुछभी न खानेवाले व्यक्तिको मोटा होता हुआ देखकर उसके रातमें खानेकी बातको सोचना। पहले न देखे हुए किसी प्राणीको यह पहले देखी हुई गायके समान है, इस प्रकार जानना। किसी वस्तुको कहीं ढूँढ़ने जाकर वहाँ उसे न पाने पर वह वहाँ नहीं है, इस प्रकार जानना। एवं खुद न देखी–सुनी–छुई–चखी–सूँघी हुई वस्तुके बारेमें दूसरोंसे सुनकर या पुस्तकोंमें पढ़कर उस वस्तुके उस–उस प्रकारके होनेको जानना। हमारे समूचे साधारण ज्ञान तथा बहुविस्तृत भौतिक विज्ञान की भी येही सीमाएँ हैं।

अतीन्द्रिय सूक्ष्म ज्ञान – वेद

परन्तु मनके अधिक निःस्वार्थ–शुद्ध, परमेश्वरके प्रति भक्तिसम्पन्न, अधिकाधिक एकाग्र–संयत एवं मूलगामी सोचनेकी आदतसे सूक्ष्मदृष्टिसम्पन्न होने पर, तब साधारण ज्ञान तथा भौतिक विज्ञानसे न जानी हुई वस्तुओंका भी प्रत्यक्ष ज्ञान होने लगता है। इस प्रकारके ज्ञानमें सबसे महत्त्वपूर्ण है – चेतनता का प्रत्यक्ष ज्ञान – समूची दुनियामें अलग–अलग प्रकारसे प्रकट अग्निको 'अग्निदेवता'के रूपमें जानना–पहिचानना, तथा इसी प्रकार 'जलदेवता', 'पृथ्वीदेवता', 'वायुदेवता' इत्यादि–इत्यादि तथा उनके अधिपति 'इन्द्रदेवता' आदिकी प्रत्यक्ष जान–पहिचान। दूसरे प्रकारका सूक्ष्म प्रत्यक्ष ज्ञान है – इन्द्रियोंकी पकड़में आनेवाले स्थूल शब्द–स्पर्श–रूप–रस–गन्धवाले पदार्थों के भीतर विद्यमान सूक्ष्म पदार्थोंका तथा उन्हींसे बनी हुई इन्द्रियों और मन–बुद्धि–चित्त–अहंकार आदि पदार्थोंका प्रत्यक्ष ज्ञान। तीसरा प्रकार है – किस कर्मका भविष्यमें किस प्रकारका फल होगा, इसका प्रत्यक्ष ज्ञान। इन्द्रियोंसे न मिलनेवाले इन तीनों प्रकारके प्रत्यक्ष ज्ञानोंका संग्रह ही 'वेद' नामसे प्रसिद्ध है।

वेदान्त – उपनिषत्

किन्तु जब हमारी 'जाननेकी शक्ति' सम्पूर्ण निःस्वार्थ–अहंशून्य, उपरिवर्णित सभी देवताओंके और पूरे जगतकेही आधारस्वरूप और सबसे परे अवस्थित परमात्मा–परमेश्वर–परब्रह्ममें अपने आपको भुला–घुला देनेवाली भक्तिसे परिपूर्ण, निःशेषतया एकाग्र, एवं चरम मूलगामी होनेसे एकमेव अद्वय, अखण्ड सत्–चित्–आनन्द वस्तुको पहिचाननेवाली बन जाती है – तब उससे प्राप्त सर्वाधिक प्रत्यक्ष या

अ–परोक्ष ज्ञानको वेदोंकी चरम सीमा अर्थात् 'वेदान्त' कहा जाता है। इन्हींका दूसरा नाम 'उपनिषत्' भी है।

शारीरक–मीमांसा–शास्त्र

चारों वेदोंमें बिखरे इन कई उपनिषदोंमें ११ या १३ या फिर २८ उपनिषत् प्रधान माने जाते हैं। इनमें हरेक की वर्णनशैली मौलिक है, भिन्न–भिन्न है। यदि हम उन सभीमें वर्णित ज्ञानको एकत्रित कर जानना चाहें तो वह किस ढ़ँगसे हो सकता है, यह सोचकर, – इस समूचे ज्ञानको अपनेमें धारण करनेके कारण 'व्यास' कहलानेवाले – भगवान बादरायण व्यासदेवजीने एक अतिमहत्त्वपूर्ण, अमोघ, पूर्णतया विश्वसनीय ग्रन्थकी रचना कर डाली, जिसे उन्होंने नाम दिया – 'शारीरक–मीमांसा–शास्त्र'। अर्थात् इस शरीरसे सीमित (शारीरिक) न होते हुएभी जिसकी प्रतीति इस शरीरके अन्दर होती है (शारीरक–), उसका यथार्थ स्वरूप उपनिषत्–वाक्योंके विश्लेषणद्वारा (मीमांसा–) प्रस्तुत करनेवाला अमोघ मार्गदर्शन (शास्त्र)। लोग इसे कई नामोंसे जानते हैं – 'वेदान्त–मीमांसा', 'उत्तर–मीमांसा', 'ब्रह्म–सूत्र', 'वेदान्त–सूत्र' इत्यादि।

चतुःसूत्री

यह कलेवरमें काफी बड़ा है – इसमें चार अध्याय और प्रत्येक अध्याय में चार–चार पाद और कुल ५५५ सूत्र हैं। ऐसा होते हुएभी ब्रह्मतत्त्वका प्रत्यक्ष अनुभव करनेकी चाह रखनेवाले मुमुक्षु के लिए इसके प्रथम चार सूत्रही पर्याप्त हैं, इसलिए यह 'चतुःसूत्री' नामसे प्रसिद्ध है।

शाङ्करभाष्य

मूल ग्रन्थ 'सूत्र–रूप' होनेके कारण कमसे कम अक्षरोंमें प्रस्तुत किया गया है। इसीलिए इसकी विशद व्याख्याकी नितान्त आवश्यकता को देखकर कई विद्वानोंने अपनी–अपनी दृष्टि लेकर इसकी व्याख्या की, जिनमें भगवान श्रीशङ्कराचार्यजीकी व्याख्या ही सर्वाधिक समीचीन–यथार्थ है।

टीका–अनुवादोंकी पारिभाषिक जटिलता

इस मर्मग्राही और अनुभव जगानेमें समर्थ व्याख्याको अर्थात् शाङ्करभाष्यको पाठकोंको ग्रहण करानेके उद्देश्यसे कई विद्वानोंने टीकाएँ तथा अनुवाद प्रस्तुत किये अवश्य, परन्तु उससे जटिलता उत्पन्न होकर मूल उद्देश्यसे दूर हटनेकी सम्भावनाके रूपमें एक नयी समस्या–विघ्न–कठिनाई आ खड़ी हो गयी। वह इस प्रकार है –

भगवान श्रीशङ्कराचार्यने पूरे भारतमें घूम–घूमकर सभीको वेदान्तकी समीचीनता–यथार्थता बताते हुए उसे ग्रहण करानेका प्रयास किया। परन्तु बङ्गालके 'तन्त्र'मतावलम्बियोंने उस समीचीनता–यथार्थताको ग्रहण न कर उसे श्रीशङ्कराचार्यका

पैनी तर्कशक्तिकी सहायतासे वेदान्तकी श्रेष्ठता प्रतिपादित करनेका प्रयास माना; और उस पराजयकी भावनासे प्रेरित हो अपनी तर्कशक्तिको अधिक पैना बनानेके हेतुसे 'नव्य–न्याय–शास्त्र'का प्रणयन किया और फिर वेदान्तके प्रत्यक्षानुभूत तत्त्वोमें केवल तर्कसे दोष दिखानेके प्रयासमें 'शतदूषणी'–जैसे ग्रन्थ रच डाले। इसके उत्तरमें वेदान्तियोंने उन्हींकी तर्कपद्धति और उन्हींकी भाषा का प्रयोग करते हुए उनके उस ग्रन्थमें प्रचुर दोष दिखाते हुए 'खण्डन–खण्ड–खाद्य'–जैसे ग्रन्थोंकी रचना की। इसके फलस्वरूप वेदान्ती अपने मूल उद्देश्यसे, मूल रास्तेसे भटक गये – ऋषियोंके प्रत्यक्षानुभव साधकोंको ग्रहण करानेकी जगह न्यायमत इत्यादिकी गलतियाँ बतानेमें शक्तिका अपव्यय होने लगा। उससेभी अधिक विघातक बात हुई – न्यायमतवाले कहीं गलती न निकालें, इस भयसे उन्हींकी जटिल पारिभाषिक शब्दावलि तथा वाक्यशैली इन टीकाओं और अनुवादोंमें प्रयुक्त होकर जटिलताको बढ़ाती चली गयी।

"'जिज्ञासा' शब्दका अर्थही 'अनुभवसे ब्रह्मप्राप्ति होनेतक न रुकनेवाली इच्छा' होता है" इस आचार्यवचनसे एवं "जो वस्तु पहिलेसे है, उसके साधारण ज्ञानका अनुभवमें पर्यवसित होनाही ब्रह्मज्ञानका स्वरूप है", इस प्रकार उनके स्पष्ट निर्देशसे अत्यन्त दूर दिशामें वेदान्तका अनुशीलन करनेवालोंकी गति होने लगी।

सरल सीधे–सादे हिन्दी शब्दोंमें अनुवाद

श्रीगुरुकी कृपा पाये हुए किसी साधकने इससे गहरे दुःखका अनुभव करते हुए इस चतुःसूत्रीके शाङ्करभाष्यका सरल सीधे–सादे हिन्दी शब्दोंमें अनुवाद करनेका प्रयास किया – जिससे आचार्यद्वारा दिखाए हुए अनुभवके मार्गपर चलना चाहनेवालोंको कुछ सहायता मिल सके। इसका आशय अनुभवमें ग्रहण करनेके लिए अन्य किन्हीं – 'न्याय' 'सांख्य' आदि – शास्त्रोंकी कतई आवश्यकता नहीं है। आवश्यक है केवल शान्त, अहंकार–आसक्ति–रहित ग्रहणशक्ति, भीतरी वस्तुके आकर्षणसे अपनीही गहराई में जानेकी गति तथा उस प्रयाससे प्राप्त होनेवाला गहराई में उतरनेका सामर्थ्य। इसमें मूल संस्कृत शब्दोंको भी सुगमतासे समझनेके लिए सन्धि–विच्छेद करते हुए प्रस्तुत किया गया है।

ऋण–निर्देश तथा सहायता–प्रार्थना

इस कार्यमें अनुवादकको भाषाकी दृष्टिसे शिमला रामकृष्ण मिशनके स्वामी रामरूपानन्द तथा चण्डीगढ़ की डा० निर्मल मित्तल से सहायता मिली है। तथापि, संस्कृत भाषा को भलीभाँति जाननेवाले, हिन्दी भाषा को भलीभाँति जाननेवाले एवं जिनके लिए यह प्रयास है, वे साधक यदि इसमें गलतियाँ बतावें या इसे और अधिक उपयुक्त बनानेके लिए सुझाव दें तो बड़ी कृपा होगी।

इति, श्रीरामकृष्णचरणार्पणमस्तु।

प्रकाशक